इम्परियल चिट फण्डस (पी) लिमिटेड

बनाम

आयकर अधिकारी , एर्नाकुलम

19 मार्च 1996

(बी.पी. जीवन रेड्डी और के.एस. परीपूरनन, जेजे.)

आयकर अधिनियम, 1996 : धारा 178 का दायरा

कम्पनी अधिनियम, 1956 : धारा 530 का दायरा

कम्पनी परिसमापन – आयकर वसूली अधिमान्य – अधिमान्य भुगतान – परिसमापन कार्यवाही – परिसमापक को कर भुगतान के लिए सूचना – परिसमापक द्वारा अलग रखी जाने वाली राशि – बाहरी तौर पर परिसमापक कार्यवाहियाँ – आयकर अधिनियम की धारा 178, कम्पनी अधिनियम की धारा 530 की प्राथमिकता योजना को प्रभावित नहीं करती है – दोनों धाराऔ का दायरा अलग अलग है।

केन्द्रीय बिक्रीकर अधिनियम 1956: धारा 17।

परिसमापन व कम्पनी – आयकर वसूली – आयकर अधिनियम की धारा 178 की व्याख्या इस परिप्रेक्ष्य में कि – क्या वह धारा 17 के लिए बिक्रीकर के लिए लागू होती है।

वसूली के आदेश परिसमापक को आयकर व केन्द्रीय बिक्रीकर दोनों प्राधिकरण द्वारा भेजे जाते हैं – वरियता – आदेश प्राप्त होने की तिथि से वरियता को तय किया जायेगा।

प्रस्तुत अपील में यह तथ्य था कि क्या आयकर अधिनियम की धारा 178 प्राथमिकता के मौजूदा कानून को प्रभावित करती है या बदलती है या कम्पनी अधिनियम की धारा 530 के तहत अधिमान्य संदाय के प्रावधानों पर अधिरोधी प्रभाव

रखती हो? इस बिन्दु पर उच्च न्यायालय द्वारा विरोधाभासी निर्णय दिये गये। केरल व आन्ध्रप्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा यह मत रखा गया कि आयकर अधिनियम की धारा 178, कम्पनी अधिनियम की धारा 530 के प्राथमिकता के सिद्धान्त को प्रभावित नहीं करती, किन्तु, आयकर अधिनियम की धारा 178 के तहत " पृथक रखी राशि कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों के तहत वितरण के लिए उपलब्ध नहीं होगी व सर्वप्रथम कर दायित्व के लिए लागू की जानी चाहिए व जिस प्रकार एक सुरक्षित लेनदार परिसमापन के बाहर रहता है, उसी प्रकार कम्पनी के अन्य ऋणों के उपर प्राथमिकता मिलनी चाहिए, जिस प्रकार की सुरक्षित लेनदारी जो कि परिसमापन कार्यवाही के बाहर रहता हैं। दूसरी और मैसूर, कलकत्ता, राजस्थान, गुजरात व दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा विरोधाभासी मत दिया गया है कि प्राथमिकता के प्रभावी कानून को प्रभावी व परिवर्तित नहीं करती तथा धारा 530 कम्पनी अधिनियम में प्राथमिक संदाय के प्रावधान पर अधिरोधी प्रभाव नहीं रखती।

उच्च न्यायालय के आदेश के अधीन अपीलान्ट कम्पनी का परिसमापन किया गया। साथ ही परिसमापन कार्यवाही के प्रारम्भ के साथ ही आयकर अधिकारी द्वारा परिसमापक को कम्पनी के 1027/-रूपये टेक्स बकाया की मांग करते हुए नोटिस दिया गया। अधिकारिक परिसमापक द्वारा एक रिपोर्ट न्यायालय के निर्देश प्राप्त करने हेतु फाईल की गई कि इस स्तर पर राजस्व के रूप में आयकर की मांग देय नहीं है, आयकर अधिकारी को इंतजार करना चाहिए व आयकर अधिकारी को तब तक अधिकारी परिसमापक के समक्ष अपना दावा साबित करना चाहिए, जब लेनदारों की सूची का निपटारा किया जायेगा। परिसमापक के तर्क को खारिज करते हुए केरला उच्च न्यायालय की सिंगल पीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि आयकर अधिनियम की धारा 178(3)(ख) यह भी कि परिसमापक द्वारा "पृथक रखी गई राशि" को परिसमापन कार्यवाही व न्यायालय द्वारा परिसमापन के क्षेत्राधिकार से बाहर रखते हुए चिन्हित किया गया है। इस निष्कर्ष पर पहुंचते हुए उच्च न्यायालय की एकल जज के निर्णय का दृष्टांत इनकम टेक्म आफिसर, एर्नाकुलम बनाम इण्डियन ट्रेडर्स बैंक, 1968 केएलटी 595 (जिसे बाद में खण्ड पीठ के निर्णय ए.एस नबर 225/1968 द्वारा

पुष्ट किया गया) जिसमें कि यहां उल्लेखित मत लिया गया। न्यायालय में अपीलार्थी द्वारा यह तर्क दिया गया कि –

आयकर अधिनियम की धारा 178 कम्पनी के परिसमापन के समय अभिभार रखने वाले व्यक्ति द्वारा अपनायी जाने वाली प्रक्रिया के संबंध में तथा आयकर देयता के संबंध में उपयुक्त व्यक्ति को सूचना दिये जाने के संबंध में प्रावधान करती है व यह धारा, कम्पनी अधिनियम की धारा 530 में बताये प्राथमिक संदाय के सिद्धान्त का प्रावधान नहीं बताती है। (ii) केरल उच्च न्यायालय द्वारा अपने आक्षेप में यह मत दिया गया कि आयकर अधिनियम की धारा 178 आयकर के प्राथमिक संदाय का प्रावधान करती है व कम्पनी अधिनियम के सुसंगत प्रावधानों के संदर्भ में समापन कार्यवाही के महत्व को प्रभावी बनाने में विफल रहता है और (iii) अन्य उच्च न्यायालय द्वारा विपरीत मत दिया गया कि आयकर अधिनियम की धारा 178 प्राथमिक संदाय का प्रावधान नहीं करती है। आयकर अधिनियम में सही विधि विहित है।

न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया गया –

1. अपील में बताये गये निर्णय इस न्यायालय पर प्रभावी हस्तक्षेप नहीं रखते, यह कानून को सही तरीके से निर्धारित करता है। मैसूर, कलकत्ता, राजस्थान, गुजरात व दिल्ली उच्च न्यायालय विधायी इतिहास, और पृष्ठभूमि को महत्व देने में विफल रहे है, जिसके कारण इस धारा का अधिनियमन किया गया व धारा 178(3) व 178(4) आयकर अधिनियम में बताये गये शब्दों का प्रभाव यह है कि अधिकारी परिसमापक द्वारा पृथक की गई राशि, व आयकर अधिकारी द्वारा बतायी गई राशि और यदि ऐसा नहीं है तो अधिकारिक पंचमापक कर राशि को देने के लिए व्यक्तिगत तौर पर दायी होगा, जिसे की कम्पनी द्वारा दिया जाना था। (655-ई; सी-डी)

2. कम्पनी अधिनियम की धारा 530 (1)(ए) का दायरा आयकर अधिनियम की धारा 178 से भिन्न है। धारा 530 (1)(ए) के तहत सभी टेक्स जो कि देय व भुगतान के योग्य है, केवल वे ही प्राथमिक संदाय हेतु अधिकृत है। राशि को दायित्व के संबंध में निश्चित रूप दिया जाना चाहिए। धारा 178(2) व 178(3) के तहत इसी समय व

बाद में देय हो, टेक्स के लिए प्रावधान बनाये जाने चाहिए। यहां तक कि जो राशि दायित्व के तौर पर निर्धारित नहीं की गई है, किन्तु " बाद में देय हो " के संबंध में भी नोट होना चाहिए। आगे यह कि धारा 178(6) आयकर अधिनियम में बताये विवेक के खण्ड को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। विधिक प्रावधानों का समग्र अवलोकन करने से यह प्रकट होता है कि आयकर विभाग को "सुरक्षित लेनदान" के बरता गया है। [652-बी-सी: 655-बी]

3. आयकर अधिनियम की धारा 178 अध्याय -15 के अन्तर्गत आती है। इस अध्याय के प्रावधानों का उद्देश्य " टेक्स अदा करने के दायित्व व अदायगी में शीघ्रता लाना है " जो आय प्राप्त हुई है, वह आय को शीघ्र समय में प्राप्त करना है व लम्बी प्रतिक्षा के स्थान पर टेक्स को भी तत्काल अदा करना है। (655-डी)

4. आयकर अधिनियम की धारा 178 में दी गई व्याख्या द्वारा केन्द्रीय बिक्रीकर अधिनियम की 1968 धारा 17 के तहत उत्पन्न होने वाले मामलों में लागू किया जाना चाहिए। किन्तु कई बार यह परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है, जहां कि दोनों अधिनियम आयकर अधिनियम व केन्द्रीय बिक्रीकर अधिनियम के तहत प्राधिकारियों द्वारा अधिकारिक परिसमापक को एक जैसे आदेश दिये जाते हैं व जहां पूर्व का प्रश्न उत्पन्न होता है। ऐसे मामलों में अधिकारिक परिसमापक को आदेश मिलने की तिथि से प्राथमिकता का निर्धारण किया जायेगा। [655-एफ]

(आयकर अधिकारी एर्नाकुलम बनाम इण्डियन ट्रेडर्स बैंक लिमिटेड, 1968 के.एल.टी. 595)]

आयकर अधिकारी कम्पनी सर्कल बैंगलोर बनाम अधिकारिक परिसमापक मैसूर उच्च न्यायालय एव अन्य, 63 आईटीआर 810 (मैसूर); अधिकारिक परिसमापक उच्च न्यायालय कलकत्ता बनाम कमिश्नर ऑफ इनकम टेक्स 80 आईटीआर 108(कल.); कमिश्नर आफ आयकर (सेन्ट्रल), नई दिल्ली एवं अन्य बनाम अधिकारिक परिसमापक गोलछा प्रोपर्टीज) प्रा०लि. एवं अन्य, 95 आईटीआर 488 (राज.); बड़ौदा बोर्ड और पेपर मिल्स लि. बनाम आयकर अधिकारी, सर्कल 1, वार्ड-ई, अहमदाबाद एवं

अन्य 102 आईटीआर 153 (गुज.); आयकर अधिकारी कम्पनी सर्कल XVII नई दिल्ली एवं अन्य बनाम नरूला फाईनैंस (पी) लि. (इन लिक्यूडेशन) 144 आईटीआर 645; आयकर अधिकारी शहर 11(2) अतिरिक्त, नई दिल्ली बनाम अधिकारिक परिसमापक, नेशनल कन्ड्रूट **(पी) लि. 128 आईटीआर 228 (दिल्ली) अस्वीकृत।**

सिविल अपील क्षेत्राधिकार : सिविल अपील नंबर 1199 (एनटी)/1979।

केरल उच्च न्यायालय रिपोर्ट नंबर 53, सीपी नंबर 1973 के 7 मे पारित निर्णय व आदेश 10.08.78 से।

के.जो.मेथ्यू व एन सुधाकरण अपीलान्ट की ओर से।

जे.रामामूर्ति, आर. सतीश व एस.एन. टण्डन रेस्पोटेन्ट की ओर से।

न्यायालय का निर्णय न्यायाधीश **पेरी पूरनन जे.** द्वारा अभिनिर्धारित किया गया।

यहां अपीलार्थी मैसर्स इम्पीरियर चिट फण्ड प्रा. लि. परिसीमन के अधीन कम्पनी है, जिसका प्रतिनिधित्व केरला उच्च न्यायालय के अधिकारिक परिसमापक द्वारा किया जा रहा है। प्रत्यर्थी एर्नाकुलम (राजस्व) के आयकर अधिकारी है। परिसमापक द्वारा यह अपील केरला उच्च न्यायालय के पूर्ण पीठ द्वारा पारित आदेश दिनांक 19.08.78 में पेश की गई है। केरला उच्च न्यायालय रिपोर्ट नंबर 53 सीपी नंबर 1973 का सातवां, इस रिपोर्ट में अधिकारिक परिसमापक द्वारा प्रार्थना की गई कि राजस्व द्वारा दावा किया गया – आयकर इस स्तर पर देय नहीं है व आयकर अधिकारी को प्रतिक्षा करनी चाहिये कि वह लेनदारों की सूची का निस्तारण हो जाये, तब अधिकारिक परिसमापक के समक्ष अपना दावा सिद्ध किया जाना चाहिये। पूर्णपीठ द्वारा अपील में आदेश द्वारा अधिकारिक परिसमापक द्वारा अपनी रिपोर्ट में की गई प्रार्थना को अस्वीकार किया। उक्त आदेश के लिए इम्पीरियल चिटफण्ड प्रा.लि. का प्रतिनिधित्व करने वाले अधिकारिक परिसमापक द्वारा अपील की गई।

2. इम्पीरियल चिटफण्ड प्रा.लि. एक निजी कम्पनी है। इसका परिसमापन उच्च न्यायालय के आदेश दिनांक 01.06.1973 सी.पी. नंबर 1973 का सातवां द्वारा किया

गया। परिसमापन कार्यवाहियों के प्रारम्भ होने के पश्चात आयकर अधिकारी द्वारा आदेश दिनांक 31.03.1975 द्वारा वर्ष 1972-73 के लिये कम्पनी का मूल्यांकन किया गया। उनके द्वारा निर्धारण किया गया कि कम्पनी का आयकर 934/- रूपये व ब्याज की राशि 93/- रूपये आयकर अधिनियम की धारा 20(2) के तहत निर्धारित की गई। इस प्रकार कुल देय राशि 1027/- रूपये है। अधिकारी परिसमापक द्वारा आयकर अधिकारी को अपने पत्र दिनांक 08.05.1975 द्वारा यह सूचित किया गया कि टेक्स व ब्याज परिसमापन कार्यवाहियों में सिद्ध किये जाने योग्य है। उन्होंने कथन किया कि वह इस स्थिति में नहीं है कि वह राशि का भुगतान कर सके। परिसमापक के अनुसार कर की राशि कम्पनी अधिनियम की धारा 530(8)(सी) में बतायी तिथि के 12 माह से पूर्व देनी चाहिए व धारा 530(1)(ए) प्रस्तुत मामले में लागू नहीं होती। आयकर अधिकारी द्वारा अधिकारिक परिसमापक की उक्त सूचना को अनदेखा कर दिया। उसके द्वारा आयकर वसूली अधिकारी को एक प्रमाण पत्र जारी किया गया व अपने पत्र दिनांक 08.12.1976 द्वारा 1027/ रूपये के तुरन्त संदाय की मांग की गई है। इसी के अनुरूप एक मांग नोटिस जारी किया गया। इसके द्वारा अधिकारीक परिसमापक को एक पत्र दिनांक 15.01.1977 मांग सूचना पत्र में वर्णित राशि के संदाय के लिये लिखा गया। इसके पश्चात अधिकारिक परिसमापक द्वारा अपनी रिपोर्ट नंबर 53 दिनांक 20.01.1977 फाईल की गई, जिसके द्वारा अधिकारिक परिसमापक द्वारा न्यायालय से सुसंगत निर्देशों हेतु अपनी रिपोर्ट पेश की, कि इस स्तर पर दावा पर टेक्स नहीं है, व आयकर अधिकारी को जब लेनदारों की सूची निर्धारित नहीं हो जाये, तब तक इंतजार करना चाहिये और अपना दावा सिद्ध करना चाहिये। विद्वान कम्पनी न्यायाधीश द्वारा यह विचार व्यक्त किया कि इस संबंध में एक रहस्यपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या आयकर अधिनियम की धारा 178 का विधिक प्रभाव यह है कि आयकर अधिकारी कम्पनी अधिनियम में दिये प्रावधानों के अतिरिक्त टेक्स की मांग कर संदाय प्राप्त करने का अधिकारी है। उनके द्वारा केरला उच्च न्यायालय के खण्डपीठ के निर्णय ए.एस. नंबर 224/1968 का संदर्भ भी दिया गया कि, जिसमें कि यह अभिनिर्धारित किया गया कि आयकर अधिनियम की धारा 178 के तहत "पृथक की गई राशि" कम्पनी अधिनियम

के प्रावधानों के तहत वितरण किये जाने के दायित्वाधीन नहीं होगी, व इस कारण परिसम्पत्तियों के वितरण में प्राथमिकता का कोई प्रश्न ही नहीं है। विद्वान कम्पनी न्यायाधीश द्वारा उत्तरवर्ती निर्णयों का मत देते हुए पूर्व में दिये गये निर्णय की शुद्धता पर संदेह किया व मामले को पूर्ण खण्डपीठ को भेजा गया। केरला उच्च न्यायालय की खण्डपीठ जिसके समक्ष मामला आया, द्वारा आदेश दिनांक 27 जून 1977 से मामला पूर्णपीठ को भेजा गया व मामले को अंतिम तौर पर सुना जाकर पूर्णपीठ द्वारा निर्णित किया गया। पूर्णपीठ का निर्णय 116 आईटीआर 176(एफ.बी.)।

3. हमने अपीलार्थी के अधिवक्ता श्री के.जॉन मैथ्यू व रेस्पोन्टेटर रावज्व के अधिवक्ता श्री जे. रामामूर्ति को सुना। मामले के निर्धारण हेतु एक मात्र मुख्य प्रश्न यह है कि क्या आयकर अधिनियम की धारा 178 प्राथमिकता के प्रभावित कानून को परिवर्तित करती है या प्रभावित करती है व कम्पनी अधिनियम की धारा 530 में दिये प्राथमिक संदाय पर अधिरोधी प्रभाव रखती है। इस बिन्दु पर विरोधाभासी निर्णय है। केरला उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने आयकर अधिकारी एर्नाकुलम बनाम इण्डियन ट्रेडर्स बैंक लि. 1968 केएलटी 595 में यह मत दिया कि आयकर अधिनियम की धारा 178 कम्पनी अधिनियम की धारा 530 में दिये प्राथमिकता को प्रभावी नहीं करती है, किन्तु, आयकर अधिनियम की धारा 178 के तहत पृथक की गई राशि कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों के तहत वितरण के लिए दायी नहीं है व सर्वप्रथम टेक्स दायित्व की संतुष्टि हेतु संदाय की जायेगी तथा कम्पनी के अन्य ऋणों पर प्राथमिकता प्राप्त होगी, इसी तरह सुरक्षित लेनदार जो कि परिसमापन कार्यवाही से पृथक है, उसके लिए उपलब्ध है। इस निर्णय को खण्डपीठ के अपील नंबर 225/1968 की अपील में शिफ्ट किया गया। आन्ध्रप्रदेश उच्च न्यायालय के खण्डपीठ द्वारा आयकर अधिकारी कम्पनी सर्कल हैदराबाद बनाम अधिकारी परिसमापक, 101 आईटीआर 470 में भी यही मत दिया गया। दूसरी ओर मैसूर, कलकत्ता, राजस्थान, गुजरात व दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय आयकर अधिकारी कम्पनी सर्कल बैगलोर बनाम परिसीमक अधिकारी मैसूर उच्च न्यायालय व अन्य 63 आईटीआर 810 (मैसूर); परिसीमक अधिकारी कलकत्ता उच्च न्यायालय बनाम आयकर कमिश्नर 80 आईटीआर 108

(कलकत्ता); आयकर कमिश्नर (सेन्ट्रल) नई दिल्ली एवं अन्य परिसीमक अधिकारी बनाम आधिकारिक परिसमापक गोलछा प्रोपर्टीज प्रा० लि. एवं अन्य, 95 आईटीआर 488 (राज०); बड़ौदा बोर्ड आैर पेपर मिल्स लि. बनाम आयकर अधिकारी, सर्कल 1, वार्ड-ई, अहमदाबाद एवं अन्य 102 आईटीआर 153 (गुजरात); आयकर अधिकारी कम्पनी सर्कल XVII नई दिल्ली एवं अन्य बनाम नरूला फाईनैंस (पी) लि. 144 आईटीआर 645; आयकर अधिकारी शहर 11(2) अतिरिक्त, नई दिल्ली बनाम परिसीमन अधिकारी, नेशनल कन्ड्यूईट (पी) लि. 128 आईटीआर 228 (दिल्ली) में यह मत दिया गया कि आयकर अधिनियम की धारा 178 प्राथमिकता के मौजूदा कानून को प्रभावी नहीं करती है व ना ही बदलती है तथा कम्पनी अधिनियम की धारा 530 में प्राथमिक संदाय के प्रावधानों पर अधिरोधी प्रभाव रखती है। (अतः हम यह कह सकते कि गुजराज उच्च न्यायालय का निर्णय 102 आईटीआर 153, इस न्यायालय के निर्णय रिपोर्टेड 189 आईटीआर 90 में पलट दिया गया है। दूसरे शब्दों में उक्त निर्णय यहां सुसंगत नहीं है।) यहां अभिनिर्धारण के लिए एक मात्र प्रश्न यह है कि दोनों में से कौनसा मत सही है।

4. इस प्रश्न पर उत्पन्न हुए विरोधाभास विश्लेषण हेतु सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि आयकर अधिनियम 196 व कम्पनी अधिनियम 1956 के सुसंगत प्रावधानों को ध्यान में रखा जाये। सुसंगत प्रावधान निम्नलिखित है:-

आयकर अधिनियम , 1961

कंपनी परिसमापक –

178. (1) प्रत्येक व्यक्ति-

(ए) जो भी कंपनी का परिसमापक अदालत के आदेश के तहत या अन्यथा बंद किया जा रहा है; या

(बी) किस कंपनी की किसी भी संपत्ति का लाभार्थी नियुक्त किया गया है; (इसके बाद परिसमापक के रूप में नियुक्त किया गया) ऐसे परिसमापक बनने

के तीस दिन बाद, उस कॅरिअम अधिकारी को अपनी अपील की सूचना दी गई है, जो कंपनी की आय का आदेश देने का उल्लेख करती है।

(2) हेल्थकेयर अधिकारी, ऐसी जानकारी के लिए पूछताछ करने के बाद, जो वह समझेगा, उस तारीख से तीन महीने के लिए सूचित किया जाएगा, जिस दिन उसे परिसमापक की सूचना प्राप्त होगी, जो राशि होगी, हेल्थकेयर अधिकारी की राय में, कंपनी द्वारा किसी भी तरह से भुगतान करने के लिए प्रोविजन करने के लिए पर्याप्त होगा, या उसके बाद होने की संभावना है।

(3) परिसमापक—

(ए) कमिश्नर की स्वामित्व के बिना, कंपनी की किसी भी संपत्ति या उसके हाथ में मौजूद संपत्ति को टैब तक नहीं छोड़ा जाएगा जब तक कि उसे उप-धारा (2) के तहत कमिश्नर अधिकारी द्वारा अधिसूचित नहीं किया जाता है; और

(बी) इस प्रकार अधिसूचित होने पर, अधिसूचित राशि के बराबर एक राशि अलग रख देगा और, जब तक वह ऐसी राशि अलग नहीं कर देता, कंपनी की किसी भी संपत्ति या उसके हाथ में मौजूद संपत्ति से अलग नहीं होता:

सिद्धांत कि इस उप-धारा में कंपनी द्वारा देय कर के भुगतान के उद्देश्य से या सुरक्षित लेनदेन को किसी भी भुगतान के लिए कुछ भी शामिल है, ऐसे ऋण कानून के तहत किसी भी भुगतान के उद्देश्य से नहीं रोका जाएगा। सरकार को देय ऋणों का भुगतान या कंपनी के समापन की ऐसी लागत और खर्चों को पूरा करने के लिए जो कमिश्नर की राय हो।

(4) यदि परिसमापक उप-धारा (1) के अनुसार नोटिस में बताया गया है कि वह या उप-धारा (3) के अनुसार आवश्यक है राशि कंपनी की किसी भी संपत्ति या संपत्ति के कुछ सिद्धांतों को अलग करने में विफल रहता है वह उपधारा के

खंड के उल्लंघन में, उसने कहा कि व्यक्तिगत रूप से भुगतान करने के लिए कंपनी भुगतान करेगी:

यदि कंपनी द्वारा किसी कर की राशि उपधारा (2) के अंतर्गत देय है, तो इस उपधारा के अंतर्गत व्यक्तिगत ऐसी राशि की सीमा तक होगी।

(5) जहां एक से अधिक परिसमापक हैं, इस धारा के अंतर्गत परिसमापक से जुड़ी देनदारियां और देयताएं सभी परिसमापकों से संयुक्त रूप से और अलग-अलग जुड़ी होंगी।

(6) इस धारा का प्रोविज़न उस समय किसी भी अन्य कानून में किसी भी विपरीत बात को प्रभावी ढंग से लागू करता है।

(जोर दिया गया)

कंपनी अधिनियम , 1956 की धारा 446

सूट समापन आदेश पर रुके हुए हैं।

446. (1) जब समापन आदेश दिया गया हो या आधिकारिक परिसमापक को अनंतिम परिसमापक के रूप में नियुक्त किया गया हो, तो कोई मुकदमा या अन्य कानूनी कार्यवाही शुरू नहीं की जाएगी। या यदि समापन आदेश की तिथि पर लंबित है, तो न्यायालय की अनुमति के अलावा और न्यायालय द्वारा लगाई गई शर्तों के अधीन कंपनी के खिलाफ कार्यवाही की जाएगी।

(2) जो न्यायालय कंपनी को बंद कर रहा है, उसे तत्समय लागू किसी भी अन्य कानून में किसी बात के होते हुए भी, निम्नलिखित पर विचार करने या निपटान करने का अधिकार क्षेत्र होगा-

(ए) कंपनी द्वारा या उसके खिलाफ कोई मुकदमा या कार्यवाही;

(बी) कंपनी द्वारा या उसके खिलाफ किया गया कोई भी दावा (भारत में उसकी किसी भी शाखा द्वारा या उसके खिलाफ दावों सहित);

(सी) कंपनी द्वारा या उसके संबंध में धारा 391 के तहत किया गया कोई भी आवेदन;

(डी) प्राथमिकताओं का कोई प्रश्न या कोई अन्य प्रश्न, चाहे वह कानून का हो या तथ्य का, जो कंपनी के समापन के दौरान संबंधित हो या उत्पन्न हो;

क्या ऐसा मुकदमा या कार्यवाही शुरू की गई है या शुरू की गई है, या ऐसा दावा या प्रश्न उत्पन्न हुआ है या उत्पन्न हुआ है या ऐसा आवेदन कंपनी के समापन के आदेश से पहले या बाद में किया गया है, या शुरू होने से पहले या बाद में किया गया है कंपनी (संशोधन) अधिनियम, 1960. (1960 का 65.)

(3) कंपनी द्वारा या उसके विरुद्ध कोई भी मुकदमा या कार्यवाही, जो उस न्यायालय के अलावा किसी अन्य न्यायालय में लंबित है, जिसमें कंपनी के समापन की कार्यवाही चल रही है, उस समय लागू किसी भी अन्य कानून में निहित किसी भी बात के बावजूद, स्थानांतरित किया जा सकता है। और उस न्यायालय द्वारा निपटारा कर दिया गया।

समापन आदेश का प्रभाव।

धारा 447 – किसी कंपनी को बंद करने का आदेश सभी लेनदारों और कंपनी के सभी अंशदाताओं के पक्ष में लागू होगा जैसे कि यह एक लेनदार और अंशदाता की संयुक्त याचिका पर दिया गया हो।

कंपनी की सम्पत्ति की अभिरक्षा :

456 -(1) जहां परिसमापक आदेश दिया गया है या जहां एक अन्तिम परिसमापक नियुक्त किया गया हे, वहां परिसमापक या अन्तिम परिसमापक, जैसा भी मामला हो, अपना कार्य करेगा। अभिरक्षा या उसके अन्यतरण में, सभी सम्पत्ति, प्रभाव और ए.सी. जिसके लिए कम्पनी हकदार है या प्रतीत होती है,

"कम्पनी सम्पत्ति का विवरण

"511 – अधिमानी वेतन के संबंध में इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, किसी कमपनी की परिसम्पत्तियों को उसके समाप्त होने पर लागू किया जायेगा।

धारा 446, 447, 529(1)(ख), 530(1)(क) धारा 448 क, 449, 451, 456(2) के अलावा, 511, 528 और कम्पनी अधिनियम के 529 को यह दिखाने के लिए कि अधिकारी ए.टी.ओ. आर. परिसमापक में कम्पनी के पूर्ण प्रभारी हैं और 650, आई.टी. अधिकारी (पी.ए.आर.पी.ओ.आर.एन.जे.) 649 अपनी देनदारियों की संतुष्टि के लिए और इस तरह के अधीन आवेदन जब तक कि लेख अन्यथा प्रदान नहीं करते हैं, सदस्यों के बीच उनके अधिकारों और हितों के अनुसार क्लेश कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1985 द्वारा शामिल किया गया।

"तरजीही भुगतानों को ओवरराइड करना"

529. (1) किसी अन्य प्रावधान में कुछ भी निहित होने के बावजूद, इस अधिनियम या उस समय लागू किसी अन्य कानून के,

एक कम्पनी का समापन –

(क) कामगारों का बकाया;

(ख) सुरक्षित लेनदारों के कारण ऋण इस हद तक कि ऐसे ऋण उपधारा (1) के परन्तुक के खण्ड (ग) के अधीन पद धारा 529 ऐसी देय राशियों के साथ, अन्य सभी ऋणों की तुलना में प्राथमिकता से भुगतान किया जायेगा।

(2) उप-धारा के खण्ड (ए) और खण्ड (बी) के तहत देय ऋण का भुगतान किया जायेगा, जब तक कि परिसम्पत्तियां अपर्याप्त न हो, उनके मिले, इस स्थिति में वे समान अनुपात में कम हो जायेगें।

"तरजीही भुगतान। "

530 (1) धारा 529 क के प्रावधानों के अधीन रहते हुए अन्य सभी ऋणों का भुगतान प्राथमिकता से किया जायेगा –

(क) निगम से देय सभी राजस्व, कर, उपकर और दरें, केन्द्र या राज्य सरकार या किसी स्थानीय सरकार को उपखण्ड (क) में परिभाषित सुसंगत तिथि पर प्राधिकारी धारा (8) के अन्तर्गत देय और देय होने के कारण उस तारीख से बारह महिने पहले; "

अपीलार्थी के वकील श्री जॉन मैथ्यू ने धाराओ पर जोर दिया।

(5) अपीलार्थी के वकील श्री जॉन मैथ्यू द्वारा कम्पनी अधिनियम के प्रावधान धारा 448 ए, 449, 451, 456(2) 457(ए), 511, 541, 529 के प्रावधानों के बजाए धारा 446, 447, 429 (1)(बी), 531 ए पर यह दर्शित करने के लिए जोर दिया कि कम्पनी के परिसमापन के समय अधिकारिक परिसमापक, परिसम्पत्तयाँ व सम्पत्तियाँ न्यायालय की अभिरक्षा में कि कम्पनी की सम्पत्तियों व परिसम्पत्तियों पर पूर्ण प्रभार रखता है। आगे तर्क दिया गया कि कम्पनी अधिनियम की धारा 530(1)(ए) राजस्व, करों, उपकरों व कम्पनी की आेर से केन्द्रीय व राज्य सरकार व स्थानीय प्राधिकारियों को दी जाने वाली देयता के संबंध में तथा कम्पनी अधिनियम स्वयं में ही एक पूर्ण संहिता है, जो कि कम्पनी के परिसमापक दायित्वों के संदाय के संबंध में सभी मामलों के संबंध में है। अधिवक्ता के अनुसार, आयकर अधिनियम की धारा 178 कम्पनी के परिसमापन के पहले उक्त भारसाधक हेतु अपनाये जाने वाली प्रक्रिया को बताती है। साथ ही आयकर देयता के संबंध में समुचित व्यक्ति को सूचना दिये जाने के संबंध में बताती है तथा यह धारा प्राथमिक संदाय को नहीं बताती है। यह तर्क दिया गया कि आयकर अधिनियम की धारा 178 का प्रयोग निहित है तथा यह कम्पनी अधिनियम की धारा 530 में बताये अधिमानी संदाय व प्राथमिक संदाय के संबंध में प्रावधान नहीं करती है। इस बिन्दु पर बहस की गई की आयकर अधिनियम की धारा 178 तथा कम्पनी अधिनियम के यहां उद्दत प्रावधान दोनों ही अलग है व भूमि ऋण आवश्यकताआेंं के लिए प्रावधान करते है। यदि इसे इस प्रकार नहीं समझा जाता व

धारा 178 आयकर अधिनियम की व्याख्या अधिमानी संदाय के संबंध में की जाती है तो उसके विनाशकारी परिणाम होते है व समापन कार्यवाहियों के संबंध में योजना व कम्पनी अधिनियम के सुसंगत प्रावधानों को समाप्त कर देगा। जब तक कि अधिमानी संदाय को निर्धारित करने का स्तर नहीं आ जाता, आयकर अधिकारी को कोई अधिकार नहीं है कि वह परिसमापक को संदाय करने हेतु दिलाये, बल्कि उसे इस स्तर तक प्रतिक्षा करनी चाहिये, जब तक कि परिसमापन कार्यवाहियों में उसका मामला साबित नहीं हो जाता। उच्च न्यायालय द्वारा आयकर अधिनियम की धारा 178 की व्याख्या इस प्रकार की गई है कि यह आयकर संदाय के अधिमानी संदाय के रूप में है। कम्पनी अधिनियम के सुसंगत प्रावधानों एवं समापन कार्यवाही को प्रभावी बनाने में विफल रही है। मैसूर, कलकत्ता, गुजरात, राजस्थान व दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा आयकर अधिनियम की धारा 178 का इस प्रकार अर्थ लिया गया कि आयकर देयता के संबंध में प्राथमिक संदाय को नहीं बताती व केरला व आन्ध्रप्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया विरोधीमत कोई सही विधि नहीं बताता है। दूसरी आेर राजस्व की अोर से अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया कि केरला व आन्ध्रप्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा आयकर अधिनियम की धारा 178 के विधिक इतिहास व पृष्ठभूमि को महत्व दिया गया है व धारा 178 आयकर अधिनियम में दिये कठिन शब्द विशेष प्रावधान है। जो राशि उक्त धारा के अनुसार पृथक रखी जानी हे, वह परिसमापन प्रक्रिया के बाहर रखी जायेगी तथा वह राशि कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों के तहत वितरण योग्य नहीं होगी। राजस्व के अधिवक्ता द्वारा आगे तर्क दिया गया कि कम्पनी अधिनियम की धारा 530(1)(ए) में बताये अधिमानी भुगतान व अधिदेय आयकर अधिनियम की धारा 178 के तहत परिसमापक को आयकर अधिकारी द्वारा अधिसूचित राशि को छोड़कर जो राशि कर के संदाय के लिए पर्याप्त हो तथा जो कि उस समय व उसके पश्चात कम्पनी द्वारा दिये जाने योग्य हो, वह भिन्न प्रकार की है तथा इस संबंध में केरला व आन्ध्रप्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा आयकर अधिनियम की धारा 178 के संबंध में जो मत दिया गया, वह है कि पृथक रखी गई राशि को सर्वप्रथम कर के संदाय के लिए उपयोग में लिया जायेगा व कानून द्वारा रखा जायेगा तथा उसके परिसमापन की कार्यवाहियों से बाहर

रखा जायेगा, यह न्यायालय मत है। आगे यह मत दिया गया कि केरल व आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय को छोड़कर अन्य उच्च न्यायालय आयकर अधिनियम की धारा 178 में वर्णित भाषा के विधिक इतिहास व पृष्ठभूमि को महत्व देने में असफल रहे।

(6). अपील के तहत दिये गये निर्णय में उच्च न्यायालय द्वारा आयकर अधिनियम 1961 की धारा 178 के वैधानिक इतिहास व पृष्ठ भूमि का उल्लेख किया गया है। उच्च न्यायालय द्वारा अपनी रिपोर्ट जो कि कम्पनी लाॅ रिफार्म कमेठी को दी गई अपनी रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया कि कर मांग में प्राथमिकता की प्रार्थना विशेष रूप से आयकर तथा यह अभिनिर्धारित किया गया कि सीमा के बिना प्राथमिक संदाय का अधिकार प्रदान नहीं किया जा सकेगा। इसे आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा अपने निर्णय में उल्लेखित किया गया। समिति को दी गई सिफारिशें न्यायालय द्वारा पूर्णतः स्वीकार नहीं की गई। इसके अलावा जो रिपोर्ट जिला कर प्रशासक जांच समिति को दी गई, (श्रीनिवासन की पुस्तक इनकम टेक्स वाॅल्यूम-।। पृष्ठ 345) यहां परिसमापक के लिए आयकर कर देयता का प्रमाण पत्र होने के संबंध में आवश्यकताओ को इंगित किया है व उसे विवश किया गया कि वह आयकर के संबंध में बकाया राशि का संदाय करने के लिए राशि को पृथक से रखे। तो इसके पश्चात ही आयकर अधिनियम 1961 की धारा 178 जो कि वर्तमान में है, जोड़ी गई। निर्णय के पेरा संख्या-4 में उक्त तथ्यों का उल्लेख करने के पश्चात उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि –

> "आदर के साथ उक्त निर्णय (जो कि विभिन्न उच्च न्यायालयों के हैं) आयकर अधिनियम की धारा 178 के उद्देश्य व कारणों के संबंध में जिससे वस्तुतः पुस्तक में उन्हें उल्लेखित किया गया, को समझने में नाकाम रहे हैं तथा पृथक रखने के संबंध में लगभग राशि जो कि कम्पनी के कर दायित्व की पूर्ति करती है, के महत्व को समझने में नाकाम रहे है। आगे वर्णित केरल व आन्ध्रप्रदेश के निर्णयों में भी यह उल्लेखित किया गया है। इससे पूर्व कि हम एेसा करे, धारा 178(3) (बी) के प्रभाव को संक्षिप्त में बताना होगा कि अलग संदाय के लिए

परिसमापक द्वारा पृथक रखी गई राशि को परिसमापन कार्यवाहियों व न्यायालय द्वारा की जाने वाली परिसमापक कार्यवाहियों को बाहर रखा गया है। यह मत केरल उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया व हम इससे सहमत है।"

यहां धारा 530(1)(ए) का विस्तार धारा 178 आयकर अधिनियम से किस प्रकार भिन्न है, हम यहां केवल यह जोड़ेगें। धारा 530(1)(ए) के अनुसार वे सभी कर जो कि देय है, वह संदाय योग्य है, वे ही केवल प्राथमिक संदाय के अधिकारी है। राशि को दायित्व के रूप मे स्पष्टतः पृथक किया जाना आवश्यक है। धारा 178(2) व 178(3) को एकसाथ देखने पर यह है कि यह प्रावधान किसी भी कर जो कि कभी या उसके बाद संदाय योग्य हो, के संबंध में बनने चाहिये। यहां तक कि जो राशि दायित्वों के लिए स्पष्टतः इंगित नहीं करती, किन्तु जो बाद में देय हो, को नोट में लिया जाना चाहिये। तथा हमें धारा 178 के निर्बाध खण्ड को ध्यान में रखना चाहिये।

(7) अपील के निर्णय में पूर्णपीठ द्वारा केरला उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के निर्णय एर्नाकुलम बनाम इण्डियन ट्रेडर्स बैंक, 1968 को लिखित किया। इस निर्णय में रमन नायर कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश एक न्यायाधीश जिन्हें की कम्पनी अधिनियम के संबंध में विशेष अनुभव था, उनके द्वारा आयकर अधिनियम की धारा 178 व कम्पनी अधिनियम की धारा 529 व 530 का उल्लेख करते हुए यह भी निर्धारित किया कि

"यह कि धारा 178 आयकर अधिनियम समझने में अधिक सरल होती किन्तु जैसा कि उक्त प्रावधानों के पठन से है, यह कम्पनी अधिनियम की धारा 530 में बताये प्राथमिकता की योजना को प्रभावित नहीं करती, तथापि निसंकोच कहा जा सकता है कि उपधारा-3 के तहत जो राशि पृथक रखी जानी चाहिए, उसे सर्वप्रथम कर दायित्व के उनमोचन के लिए उपयोग किया जाना चाहिये तथा इस प्रकार कम्पनी

के ऋणों पर कर दायित्व प्राथमिकता रखता है। जिस प्रकार एक सुरक्षित लेनदार जो कि परिसमापन कार्यवाहियों के बाहर पृथक रखा जाता है तथा जिसकी प्रतिभूति को प्रोविन्शियल इस्टोलवेंसी एक्ट व कम्पनी अधिनियम की धारा 529 के तहत भुनाया जाता है, वह प्रतिभूति के मूल्यांकन के उपर प्राथमिकता रखती है। किन्तु आयकर अधिनियम की धारा 178 (3) जो कि परिसमापन के विषय में बताती है, व जहां सुरक्षित लेनदार के ऋणों के संदाय में दी जाने वाली राशि सरकार की तरफ बकाया राशि पर अधिमान रखती है। एक मात्र संदाय जो कि परिसमापक द्वारा सुरक्षित लेनदार को किया जाना है, जिसमें कि अपनी प्रतिभूति के पेमेन्ट को धारा 47(4) प्रोविन्शियल इन्टालेवेंसी एक्ट के तहत अपनी प्रतिभूति को नहीं त्यागा है। किन्तु तथापि जो कि परिसमापक को अपनी सम्पत्ति निलंगमों से मुक्त होकर बेचने से सहमत है। अपनी सम्पत्ति पर स्वयं के समान हक देने को तैयार है। यहां यह सम्पत्ति लेनदारों के मध्य परिसमापन के समय वितरीत किये जाने के लिए प्राथमिक तौर पर दायी नहीं है। वे उसी समान स्तर पर है, जैसे कि ट्रस्ट की निधि होती है। जो वितरण के लिए उपलब्ध है, यह आसत्तियाँ जो कि परिसमापक के हाथों में आती है और जो कि सुरक्षित लेनदार को भी लगभग निलंगमों के समाप प्राप्त होती है और जो कि आयकर अधिनियम की धारा 178 के तहत आती है, वहां तथाकथित राशि टेक्स संदाय के लिए चिन्ह्रित होती है। इस धारा की उपधारा 2,3,4 को देखने से यह निसंदेह कहा जा सकता है कि यह धारा पृथक रखी गई राशि को सर्वप्रथम धारित करने के लिए बनाया है। जबकि उपधारा-3 इसके सबूत के रूप में है। यह कहा जा सकता है कि परिसमापन कार्यवाही में परिसमापक द्वारा पृथक रखी गई राशि टेक्स संदाय के लिए होती है। अतः यह धारा केवल इस संदर्भ में यह बताती है कि कम्पनी की परिसम्पत्तियाँ बिना पर्याप्त

निधि के वितरीत नहीं की जा सकती। उक्त धारा की उपधारा -2 यह प्रावधान करती है कि कम्पनी द्वारा दिये जाने वाले कर व उपधारा-4 कम्पनी की ओर से संदाय को बताती है। धारा 530 कम्पनी अधिनियम के विरोध में इस धारा का सप्सीट्यूट है। कम्पनी अधिनियम की धारा 530 के तहत कर दायित्व साधारण है, न कि एक विशेष दावा है तथा जो राशि आयकर अधिनियम की धारा 178(3) के तहत सुरक्षित रखी जाती है, वह राजस्व के तहत उस पर सुरक्षित लेनदार को बाहर रखते हुए दावा किया जा सकता है। "

खण्डपीठ द्वारा सीएस नंबर 225/1958 में उक्त निर्णय को उन्मोदित किया व यह अभिनिर्धारित किया कि –

हम धारा 178(2) के प्रावधानों को अनदेखा नहीं कर सकते, जो कि कम्पनी अधिनियम की धारा 530 में बतायी राशि को अधिमान देती है। जब हम धारा 178(4) के प्रावधानों पर मनन करते है, जिसके द्वारा परिसमापक अधिकारी को टेक्स के तौर पर दायी बनाया गया है तथा कमपनी जभी दायी होगी, जबकि परिसमापक द्वारा 178(1) के तहत नोटिस देने में विफल रहता है। अतः यह दर्शित होता है कि धारा 178(3) अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा बताये गये तर्कों के अधीन महत्व रखता है, अपील के तहत यही मत लिया गया, जिसे कि कुछ वाक्यों में कहा गया है, हम विद्वान न्यायाधीश द्वारा दिये गये मत से सहमत है।"

उपर्युक्त पेरा का अनुमोदन करते हुए पूर्णपीठ द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि आयकर अधिनियम की धारा 178 (2), 178(3) जो कि अधिकारिक परिसमापक को पृथक रखी गई राशि को आयकर अधिकारी द्वारा बतायी गई राशि को बराबर कर्तव्य देती है। यह भी अभिनिर्धारित किया कि इसका तात्पर्य यह है कि

"विशिष्ट उद्देश्य के लिय अलग रखा जाना" तथा पृथक की गई व पृथक रखी गई राशि एक दूसरे के पर्यायवाची है। पूर्णपीठ द्वारा निर्णय के पेरा संख्या-6 में यह अभिनिर्धारित किया गया "पृथक की गई शब्दों का तात्पर्य आयकर संदाय के संबंध में यह है कि यह कम्पनी न्यायालय की परिसमापन कार्यवाहियों से पृथक है। यह विचार एजी मुख्य न्यायाधीश रामनायक द्वारा पूर्ण पीठ में दिया गया है। आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णय आईटीओ बनाम अधिकारिक परिसमापक 101 आईटीआर 470 में भी यही मत लिया गया। हम केरला उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा दिये गये विनिश्चय आईटीओ बनाम इण्डियन ट्रेडर्स बैंक लि. 1958 केएलटी जिसे कि एएस नंबर 225/68 में समर्थन दिया गया व अपील में पूर्ण पीठ द्वारा अनुमोदित किया गय तथा जिसे आन्ध्रप्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णय आईटीओ बनाम अधिकारिक परिसमापक 101 आईटीआर 470 के लिए सही तौर पर बताया गया है। सुसंगत विधिक प्रावधानों को देखने से यह प्रतीत होता है कि आयकर विभाग को सुरक्षित लेनदार के तरह बरता गया है मैसूर, कलकत्ता, गुजरात राजस्थान, दिल्ली उच्च न्यायालय आयकर अधिनियम की धारा 178(2), 178(4) के विधिक इतिहास व पृष्ठभूमि को महत्व देने में विफल रहे है। व अधिकारिम परिसमापक को व्यक्तिगत तौर पर कम्पनी की कर राशि को अदा करने के लिए दायित्वधीन माना है। आयकर अधिनियम की धारा 178 अध्याय 15 में आती है। इस प्रावधान का उद्देश्य कर के संबंध में दायित्व में शीघ्रता लाना है तथा टेक्स संदाय के लिए लम्बे समय तक प्रतीक्षा करना नहीं है। अतः यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि अपील के निर्णय में बदलाव किये जाने का कोई ओचित्य नहीं है।"

8. सुनवाई के समय केन्द्रीय बिक्रीकर कानून 1956 की धारा 17 व आयकर अधिनियम की धारा 178 के समान है, पर भी ध्यान आकर्षित किया गया। हम यह मत रखते हैं कि आयकर अधिनियम की धारा 178 की व्याख्या केन्द्रीय बिक्रीकर कानून की धारा 17 में भी उत्पन्न होने वाले मामलों में लागू होती है। किन्तु जबकि उक्त दोनों ही अधिनियम के तहत प्राधिकारियों द्वारा एक समान आदेश अधिकारिक परिसमापक को दिये जाते हैं, तब पूर्ववर्ती का प्रश्न उत्पन्न हो सकता है। हमारे मत में ऐसे मामलों में अधिकारिक परिसमापक को आदेश निर्णय की तिथि से प्राथमिकता की गणना की जायेगी।

9. अतः अपील का निर्णय पुष्ट किया जाता है। अपील अस्वीकार की जाती है और खर्चों के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाता है।

अपील अस्वीकार

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल्स "सुवास" की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी **मनीषा शर्मा (आर.जे.एस.)** द्वारा किया गया है।

<u>अस्वीकरण :</u> यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।

मनीषा शर्मा

(आर.जे.एस.)